Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed /Refereed Open Access Journal
Vol. 3, Issue 3, July-September, 2025
Available online : https://www.biharshodhsamaagam.com/
ISSN : 3048-6971

उत्तर पूर्वी राज्यों में पहचान की राजनीति–एक अवलोकन

डॉ सोमेश गुंजन
सहायक प्राध्यापक अतिथि संकाय
विषय–राजनीति विज्ञान
आर एस एस साइंस कॉलेज, सीतामढ़ी
(बी आर ए बिहार विश्वविद्यालय मुजफ्फरपुर)

प्रस्तावना

उत्तर पूर्वी भारत, अपने आठ राज्यों असम, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नगालैंड, सिक्किम और त्रिपुरा के साथ, एक ऐसी भूमि है जहां पहाड़ों की शांति, नदियों का संगीत और संस्कृतियों की रंगबिरंगी छटा एक अनूठा ताना–बाना बुनती है। यह क्षेत्र न केवल अपनी प्राकृतिक सुंदरता के लिए जाना जाता है, बल्कि अपनी गहरी सांस्कृतिक और जातीय विविधता के लिए भी। यहां हर समुदाय की अपनी कहानी हैकृअपनी भाषा, परंपराएं और इतिहास, जो उनकी पहचान को परिभाषित करते हैं। लेकिन यही विविधता, जो इस क्षेत्र की ताकत है, कई बार तनाव और संघर्ष का कारण भी बनती है। पहचान की राजनीति, जो इन समुदायों की अस्मिता को केंद्र में रखती है, उत्तर पूर्व के सामाजिक और राजनीतिक जीवन का एक अभिन्न हिस्सा है। यहां के लोग अपनी संस्कृति, भाषा और जमीन से गहरा लगाव रखते हैं। यह लगाव उनकी मांगों में झलकता है, चाहे वह स्वायत्तता की बात हो, संसाधनों पर अधिकार की, या अपनी सांस्कृतिक पहचान को बचाने की। लेकिन यह यात्रा आसान नहीं है। औपनिवेशिक काल से लेकर आज तक, इस क्षेत्र ने अलगाव, उपेक्षा और आर्थिक असमानता का सामना किया है। असम में प्रवास के खिलाफ आंदोलन हो या नगालैंड में स्वशासन की मांग, ये सभी एक गहरी चाहत को दर्शाते हैं, अपनी जड़ों को सहेजने और अपने हक को सुनिश्चित करने की।

पहचान की राजनीति ने जहां एक ओर स्थानीय समुदायों को अपनी आवाज बुलंद करने का मंच दिया, वहीं इसने समुदायों के बीच तनाव भी पैदा किया है। यह लेख इस जटिल गतिशीलता को समझने का प्रयास करता है, कैसे यह क्षेत्र अपनी विविधता को गले लगाते हुए एकजुटता की तलाश कर रहा है। यह कहानी केवल नीतियों और आंदोलनों की नहीं, बल्कि उन लोगों की है, जो अपनी पहचान को जीते हैं और उसे संजोते हैं।

मुख्य शब्द : मुख्यधारा , संस्कृति , संसाधनों, असमानता, राजनीति ,भौगोलिक, प्रशासनिक, आवाज।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

उत्तर पूर्वी भारत की धरती, जहां नदियां गीत गाती हैं और जंगल कहानियां सुनाते हैं, एक ऐसी सांस्कृतिक में है जो सदियों से अपनी अनूठी पहचान को संजोए हुए है। इस क्षेत्र का इतिहास केवल घटनाओं का लेखा–जोखा नहीं, बल्कि उन लोगों की कहानी है जो अपनी भाषा, संस्कृति और जमीन के लिए लड़े। औपनिवेशिक काल में ब्रिटिश शासकों ने इस क्षेत्र को मुख्यधारा भारत से काटकर रखा, जैसे कोई परिवार का हिस्सा हो पर उसे दूर की मेज पर बिठा दिया जाए। ''इनर लाइन परमिट'' जैसी नीतियों ने स्थानीय समुदायों को बाहरी दुनिया से अलग–थलग कर दिया, जिससे उनकी विशिष्ट पहचान और गहरी हो गई। स्वतंत्रता के बाद, जब भारत एक राष्ट्र के रूप में एकजुट होने की कोशिश कर रहा था, उत्तर पूर्व के लोग अपनी अस्मिता को बचाने के लिए जूझ रहे थे। असम में 1979–1985 का आंदोलन, जिसने बाहरी लोगों के खिलाफ आवाज उठाई, या नगालैंड में स्वशासन की मांग, ये सिर्फ राजनीतिक घटनाएं नहीं थीं, ये उन लोगों की पुकार थीं जो अपनी जमीन, अपनी संस्कृति को खोने के डर से जूझ रहे थे। बोडो, मेइतेई, कुकी जैसे समुदायों ने अपनी कहानियों को जीवित रखने के लिए संघर्ष किया, चाहे वह भाषा के माध्यम से हो या अपनी परंपराओं के माध्यम से।

यह अलगाव केवल भौगोलिक नहीं था। आर्थिक उपेक्षा और संसाधनों पर बाहरी नियंत्रण ने भी असंतोष को हवा दी। चाय बागानों से लेकर तेल के कुओं तक, इस क्षेत्र के संसाधनों ने देश को समृद्ध किया, लेकिन स्थानीय लोगों को अक्सर सिर्फ खाली वादे मिले। इन सबके बीच, पहचान की राजनीति एक ढाल बनकर उभरी एक ऐसी ताकत जो समुदायों को उनकी जड़ों से जोड़े रखती थी। यह इतिहास उन लोगों की आकांक्षाओं, उनके गुस्से और उनकी उम्मीदों की कहानी है, जो अपनी पहचान को न केवल जीना चाहते थे, बल्कि उसे गर्व के साथ अगली पीढ़ी तक पहुंचाना चाहते थे।

पहचान की राजनीति के प्रमुख कारक

1. जातीय और सांस्कृतिक विविधता

उत्तर पूर्वी भारत की आत्मा उसकी विविधता में बसती है। असम की चाय बागानों की हरियाली से लेकर नगालैंड की पहाड़ी बस्तियों तक, यह क्षेत्र सैकड़ों जनजातियों और समुदायों का घर है, जिनमें से प्रत्येक अपनी अनूठी भाषा, परंपराओं और कहानियों को गर्व से जीता है। मणिपुर में मेइतेई लोग अपने नृत्य और लोककथाओं को सहेजते हैं, तो कुकी और नगा समुदाय अपनी अलग सांस्कृतिक पहचान को जीवंत रखते हैं। मिजोरम के लोग अपने गीतों में इतिहास गाते हैं, जबकि अरुणाचल की

जनजातियां अपने रंग–बिरंगे त्योहारों में जीवन का उत्सव मनाती हैं। यह विविधता इस क्षेत्र की ताकत है, लेकिन यही इसकी सबसे बड़ी चुनौती भी है। हर समुदाय अपनी संस्कृति को न केवल एक धरोहर, बल्कि अपनी पहचान का आधार मानता है। यह पहचान उनकी जड़ों से जुड़ी है, उनके गीतों, नृत्यों, और कहानियों में, जो पीढ़ियों से चली आ रही हैं। लेकिन जब यह पहचान खतरे में पड़ती है, चाहे वह बाहरी प्रभावों से हो या संसाधनों की असमानता से, तो यह एकजुटता की जगह तनाव को जन्म देती है। उदाहरण के लिए, नगालैंड में 16 से अधिक जनजातियां हैं, और प्रत्येक की अपनी विशिष्ट परंपराएं हैं। जब इन समुदायों को लगता है कि उनकी संस्कृति को उचित सम्मान नहीं मिल रहा, तो वे अपनी आवाज उठाते हैं, कभी शांति से, कभी आंदोलनों के जरिए।

यह सांस्कृतिक पहचान की राजनीति का आधार बनता है। लोग अपनी भाषा, अपनी जमीन, और अपने रीति–रिवाजों को बचाने के लिए संगठित होते हैं। यह संघर्ष सिर्फ अधिकारों का नहीं, बल्कि अपने वजूद को जीवित रखने का है। जब एक मेइतेई मां अपनी बेटी को मणिपुरी नृत्य सिखाती है, या जब एक नगा बुजुर्ग अपने पोते को जनजातीय कहानियां सुनाता है, तो यह सिर्फ परंपरा नहीं, बल्कि एक ऐसी लड़ाई है जो उनकी पहचान को जीवित रखती है। इस क्षेत्र में पहचान की राजनीति इसलिए जटिल है, क्योंकि यह केवल राजनीति नहीं, बल्कि उन लोगों की भावनाओं, सपनों और गर्व की कहानी है जो अपनी संस्कृति को हर हाल में बचाना चाहते हैं।

2. भौगोलिक और प्रशासनिक अलगाव

उत्तर पूर्वी भारत की भौगोलिक बनावट ही उसकी कहानी को अनूठा बनाती है। सिलीगुड़ी कॉरिडोर, जिसे ''चिकन नेक'' कहा जाता है, इस क्षेत्र को मुख्यधारा भारत से जोड़ने वाला एकमात्र पतला धागा है। यह भौगोलिक दूरी केवल नक्शे की बात नहीं, बल्कि उन लोगों की जिंदगी का हिस्सा है जो पहाड़ों, जंगलों और नदियों के बीच बसे हैं। इस दूरी ने एक ऐसी भावना को जन्म दिया है, जैसे वे देश के बाकी हिस्सों से कटे हुए हैं। यह अलगाव केवल भौगोलिक नहीं, बल्कि प्रशासनिक और भावनात्मक भी है। औपनिवेशिक काल में ब्रिटिश शासकों ने इस क्षेत्र को ''इनर लाइन परमिट'' जैसे नियमों से अलग रखा। यह नीति उस समय स्थानीय समुदायों को बाहरी प्रभावों से बचाने के लिए थी, लेकिन इसने एक दीवार भी खड़ी कर दी। स्वतंत्रता के बाद भी, यह अलगाव पूरी तरह खत्म नहीं हुआ। सरकारी नीतियां और योजनाएं अक्सर दिल्ली या कोलकाता से बनती थीं, जिनमें इस क्षेत्र की जटिल जरूरतों को समझने की कमी दिखती थी। यह ऐसा था जैसे कोई दूर बैठकर किसी और की कहानी लिखने की कोशिश कर रहा हो।

यह अलगाव स्थानीय लोगों के लिए सिर्फ एक प्रशासनिक मुद्दा नहीं है। यह उनकी रोजमर्रा की जिंदगी का हिस्सा है। जब सड़कें टूटती हैं, या बुनियादी सुविधाएं नहीं पहुंचतीं, तो लोगों को लगता है कि उनकी आवाज अनसुनी रह गई। इस असंतोष ने पहचान की राजनीति को जन्म दिया। लोग अपनी जमीन, अपने अधिकारों और अपनी पहचान की रक्षा के लिए संगठित हुए। उदाहरण के लिए, नगालैंड और मिजोरम जैसे राज्यों में स्वायत्तता की मांग इस भावना से उपजी है कि उनकी अनूठी जरूरतों को केवल स्थानीय शासन ही समझ सकता है। यह संघर्ष केवल नीतियों का नहीं, बल्कि उन लोगों का है जो चाहते हैं कि उनकी आवाज, उनकी कहानी, और उनकी संस्कृति को वह सम्मान मिले, जिसके वे हकदार हैं।

3. आर्थिक असमानता और संसाधनों पर नियंत्रण

उत्तर पूर्वी भारत की धरती समृद्ध है, चाय के हरे–भरे बागान, तेल के भंडार, और घने जंगल इसकी दौलत हैं। लेकिन इस समृद्धि की कहानी में एक कड़वा सच छिपा है। इस क्षेत्र के लोग अक्सर अपनी ही जमीन की संपदा से वंचित रहे हैं। आर्थिक असमानता और संसाधनों पर बाहरी नियंत्रण ने इस क्षेत्र में पहचान की राजनीति को गहराई से प्रभावित किया है। यह कहानी उन लोगों की है, जिनके खेतों में चाय उगती है, लेकिन उसका लाभ दूर के शहरों में बंटता है। असम के चाय बागानों में काम करने वाले मजदूर, जिनमें से कई आदिवासी समुदायों से हैं, पीढ़ियों से मेहनत करते हैं, लेकिन उनकी जिंदगी में बदलाव धीमा है। तेल और प्राकृतिक गैस जैसे संसाधनों का दोहन बड़े निगम करते हैं, लेकिन स्थानीय समुदायों को इससे मिलने वाला हिस्सा न के बराबर है। यह असमानता केवल आंकड़ों की बात नहीं, यह उन मां–बाप की चिंता है जो अपने बच्चों के लिए बेहतर भविष्य चाहते हैं, और उन युवाओं की निराशा है जो रोजगार के लिए अपने गांव छोड़ने को मजबूर हैं।

इस आर्थिक असमानता ने लोगों में असुरक्षा की भावना को जन्म दिया है। जब उन्हें लगता है कि उनकी जमीन और संसाधनों पर उनका हक नहीं है, तो वे अपनी पहचान के इर्द–गिर्द संगठित होते हैं। असम में ''असमिया पहले'' की भावना या त्रिपुरा में आदिवासी समुदायों की मांगें इसकी मिसाल हैं। ये आंदोलन सिर्फ आर्थिक हिस्सेदारी की मांग नहीं करते, बल्कि यह चाहते हैं कि स्थानीय लोगों को उनकी जमीन और संसाधनों का मालिकाना हक मिले। यह एक ऐसी लड़ाई है, जो केवल पैसे की नहीं, बल्कि सम्मान और आत्मसम्मान की है। लोग चाहते हैं कि उनकी मेहनत, उनकी जमीन, और उनकी संस्कृति को वह महत्व मिले, जो वे हकदार हैं।

4. प्रवास और जनसांख्यिकीय परिवर्तन

उत्तर पूर्वी भारत की जनसांख्यिकीय तस्वीर हमेशा से बदलती रही है, जैसे नदी का प्रवाह जो किनारों को नया आकार देता है। बांग्लादेश, नेपाल और अन्य क्षेत्रों से प्रवास ने असम और त्रिपुरा जैसे राज्यों में सामाजिक और सांस्कृतिक संतुलन को

प्रभावित किया है। यह प्रवास केवल लोगों का आना–जाना नहीं, बल्कि उन भावनाओं की कहानी है, जो स्थानीय समुदायों में असुरक्षा और पहचान के सवाल उठाती हैं। असम में 1979–1985 का असम आंदोलन इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। स्थानीय असमिया समुदाय को लगा कि बाहरी प्रवास उनकी संस्कृति, भाषा और जमीन को खतरे में डाल रहा है। यह डर केवल संख्याओं का नहीं थाय यह उस गहरे लगाव का था जो लोग अपनी मिट्टी और अपनी पहचान से महसूस करते हैं। त्रिपुरा में आदिवासी समुदायों ने भी यही चिंता जताई, जब गैर–आदिवासी आबादी बढ़ने से उनकी सांस्कृतिक और राजनीतिक ताकत कम होती दिखी।

यह मुद्दा सिर्फ आंकड़ों या नीतियों का नहीं, बल्कि उन लोगों की भावनाओं का है जो अपनी जड़ों को खोने के डर से जूझ रहे हैं। जब एक असमिया परिवार अपनी भाषा को स्कूलों में कमजोर होते देखता है, या जब एक आदिवासी बुजुर्ग को लगता है कि उनकी परंपराएं भुला दी जा रही हैं, तो यह सिर्फ बदलाव नहीं, बल्कि एक अस्तित्व की लड़ाई बन जाती है। इस डर ने आंदोलनों को जन्म दिया, जैसे ऑल असम स्टूडेंट्स यूनियन (AASU) या त्रिपुरा के आदिवासी संगठन, जो अपनी पहचान और हक की रक्षा के लिए लड़े। प्रवास ने न केवल सामाजिक तनाव को बढ़ाया, बल्कि पहचान की राजनीति को भी गहरा किया। यह उन लोगों की कहानी है जो अपनी संस्कृति, अपनी जमीन और अपने इतिहास को बचाने के लिए एकजुट हुए। यह संघर्ष केवल नीतियों या सीमाओं का नहीं, बल्कि उस गर्व और प्रेम का है, जो लोग अपनी पहचान के लिए महसूस करते हैं।

पहचान की राजनीति के स्वरूप

1. स्वायत्तता और अलगाववादी आंदोलन

उत्तर पूर्वी भारत के लोग अपनी जमीन, अपनी संस्कृति और अपनी कहानियों से गहरा लगाव रखते हैं। यह लगाव ही स्वायत्तता और अलगाववादी आंदोलनों का आधार बनता है, जो इस क्षेत्र की पहचान की राजनीति का एक महत्वपूर्ण स्वरूप है। नगालैंड में, नगा लोग अपनी अलग पहचान और इतिहास को लेकर गर्व करते हैं। उनकी मांग ''ग्रेटर नगालिम'' की, जो नगा–निवासित क्षेत्रों को एक करने का सपना है, केवल एक राजनीतिक मांग नहीं, बल्कि अपने वजूद को संजोने की पुकार है। नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नगालैंड (NSCN) जैसे संगठन इस सपने को साकार करने के लिए दशकों से संघर्षरत हैं। यह संघर्ष सिर्फ सत्ता का नहीं, बल्कि उस गर्व का है, जो एक नगा बुजुर्ग अपने पोते को अपनी जनजातीय कहानियां सुनाते वक्त महसूस करता है। मणिपुर में भी यही कहानी दोहराई जाती है। मेइतेई, कुकी और नगा समुदायों के बीच स्वायत्तता की मांग ने तनाव को जन्म दिया है। कुकी समुदाय अपनी अलग प्रशासनिक इकाई की मांग करते हैं, क्योंकि उन्हें लगता है कि उनकी आवाज मणिपुर के व्यापक ढांचे में दब जाती है। यह मांग केवल कागजी नहीं, यह उस मां की चिंता है, जो चाहती है कि उसका बच्चा अपनी भाषा और संस्कृति में बड़ा हो। इन आंदोलनों में हिंसा और अशांति भी देखी गई, लेकिन इसके पीछे एक गहरी भावना है, अपनी जड़ों को बचाने की, अपनी पहचान को जीवित रखने की।

ये आंदोलन केवल राजनीतिक मंचों तक सीमित नहीं हैं। यह उस युवा का गुस्सा है, जो अपनी जमीन पर बाहरी हस्तक्षेप को देखकर बेचैन होता है। यह उस समुदाय की एकजुटता है, जो अपने त्योहारों, गीतों और रीति–रिवाजों को जीवित रखना चाहता है। स्वायत्तता की यह मांग, चाहे वह नगालैंड में हो या मिजोरम में, एक गहरी आकांक्षा को दर्शाती है, अपने लोगों, अपनी संस्कृति और अपने इतिहास को सम्मान और स्वतंत्रता के साथ जीने की। यह केवल सत्ता की लड़ाई नहीं, बल्कि अपने घर, अपनी मिट्टी और अपनी कहानी को बचाने की लड़ाई है।

2. संवैधानिक प्रावधान और विशेष दर्जा

उत्तर पूर्वी भारत के लोगों की अनूठी पहचान को संरक्षित करने के लिए भारत का संविधान कई विशेष प्रावधान प्रदान करता है, जो इस क्षेत्र की पहचान की राजनीति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। छठी अनुसूची और अनुच्छेद 371 जैसे प्रावधान स्थानीय समुदायों को स्वशासन और उनकी संस्कृति की रक्षा का अधिकार देते हैं। ये प्रावधान केवल कानूनी धाराएं नहीं, बल्कि उन लोगों की उम्मीदों का प्रतीक हैं, जो अपनी परंपराओं और जमीन को बचाना चाहते हैं। यह विशेष दर्जा केवल कागजी नियम नहीं, बल्कि उन लोगों की जिंदगी से जुड़ा है, जो अपनी संस्कृति को जीवित रखना चाहते हैं। जब एक मिजो युवा अपनी परंपराओं को अपने गांव में फलते–फूलते देखता है, तो उसे लगता है कि उसकी पहचान सुरक्षित है। लेकिन जब इन प्रावधानों का लाभ समान रूप से नहीं पहुंचता, तो यह असंतोष को जन्म देता है। यह केवल कानून की बात नहीं, बल्कि उस गर्व और सुरक्षा की भावना की है, जो लोग अपनी जमीन और संस्कृति से जोड़ते हैं। यह प्रावधान एक सेतु हैं, जो स्थानीय समुदायों को राष्ट्रीय ढांचे से जोड़ते हैं, लेकिन यह सेतु तभी मजबूत होगा, जब इसे समावेशी और संवेदनशील नीतियों के साथ लागू किया जाए।

भारतीय संविधान के विशेष प्रावधान : अनुच्छेद 371-A, 371-B, 371-C, 371-F, 371-G तथा छठी अनुसूची भारतीय संविधान में कुछ राज्यों को उनकी ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक और जनजातीय विशेषताओं के कारण विशेष प्रावधान प्रदान किए गए हैं। ये प्रावधान मुख्य रूप से पूर्वोत्तर भारत के राज्यों से संबंधित हैं, जहां जनजातीय समुदायों की संस्कृति, भूमि अधिकार और स्वायत्तता को संरक्षित करने का उद्देश्य है। अनुच्छेद 371 के अंतर्गत आने वाले उप–अनुच्छेद (371A से 371J तक) तथा संविधान की छठी अनुसूची ऐसे ही विशेष सुरक्षा उपाय हैं। नीचे अनुच्छेद 371-A, 371-B, 371-C, 371F तथा 371G के प्रावधानों की विस्तृत चर्चा की गई है, साथ ही छठी अनुसूची के प्रमुख प्रावधानों पर भी प्रकाश डाला गया है।

2.1 अनुच्छेद 371- A: नागालैंड के लिए विशेष प्रावधान

पृष्ठीभूमि : यह प्रावधान 1962 में नागालैंड को पूर्ण राज्य का दर्जा दिए जाने के बाद संविधान (तेरहवें संशोधन) अधिनियम, 1962 द्वारा जोड़ा गया। इसका उद्देश्य नागा जनजातियों की धार्मिक, सामाजिक प्रथाओं, प्रथागत कानूनों और भूमि स्वामित्व को संरक्षित करना है।

मुख्य प्रावधान :

संसद नागालैंड में धार्मिक या सामाजिक प्रथाओं, प्रथागत कानूनों, नागा प्रथागत विधि और प्रक्रिया, तथा नागरिक मामलों में प्रथागत निर्णय (जैसे भूमि विवाद) से संबंधित कोई कानून नहीं बना सकती, जब तक कि नागालैंड विधानसभा स्पष्ट संकल्प द्वारा ऐसा करने की अनुमति न दे। भूमि और उसके संसाधनों (जैसे खनिज, वन) पर स्वामित्व और हस्तांतरण से संबंधित कानून भी इसी प्रतिबंध के अधीन हैं। राज्यपाल को विशेष जिम्मेदारी राज्यपाल को तुएनसांग जिले (नागालैंड का एक हिस्सा) के प्रशासन के लिए विशेष प्रावधान बनाने का अधिकार है, और वह विधानसभा की सिफारिश पर कार्य करता है।

महत्व : यह नागा संस्कृति की स्वायत्तता सुनिश्चित करता है और केंद्र द्वारा एकतरफा हस्तक्षेप को रोकता है।

2.2 अनुच्छेद 371- B: असम के लिए विशेष प्रावधान

पृष्ठभूमि : संविधान (बाईसवें संशोधन) अधिनियम, 1969 द्वारा जोड़ा गया। यह असम में जनजातीय क्षेत्रों (मुख्य रूप से मिजो हिल्स, अब मिजोरम) की विशेष आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर बनाया गया।

मुख्य प्रावधान :

राष्ट्रपति असम विधानसभा में जनजातीय क्षेत्रों के लिए एक समिति गठित करने का निर्देश दे सकता है। यह समिति विधानसभा के सदस्यों से बनेगी, जिसमें जनजातीय क्षेत्रों से चुने गए सदस्यों की बहुलता होगी। समिति का उद्देश्य जनजातीय क्षेत्रों से संबंधित विधेयकों और नीतियों पर सलाह देना है, ताकि उनकी विशेष जरूरतों को ध्यान में रखा जा सके।

महत्व : हालांकि मिजोरम अब अलग राज्य है, यह प्रावधान असम के शेष जनजातीय क्षेत्रों (जैसे बोडो, कार्बी) के लिए सुरक्षा प्रदान करता है। बाद में बोडो टेरिटोरियल काउंसिल जैसे समझौतों से यह और मजबूत हुआ।

2. 3 अनुच्छेद 371-C: मणिपुर के लिए विशेष प्रावधान

पृष्ठभूमि : संविधान (सत्ताईसवें संशोधन) अधिनियम, 1971 द्वारा मणिपुर को पूर्ण राज्य का दर्जा दिए जाने पर जोड़ा गया। मणिपुर के हिल एरिया (जनजातीय बहुल) और वैली एरिया (मैतेई बहुल) के बीच संतुलन बनाए रखने के लिए।

मुख्य प्रावधान :

राष्ट्रपति मणिपुर के हिल एरिया के प्रशासन के लिए राज्यपाल को विशेष जिम्मेदारी सौंप सकता है। राज्यपाल हिल एरिया कमिटी (विधानसभा के हिल सदस्यों से बनी) की सिफारिश पर कार्य करता है। हिल एरिया से संबंधित विधेयकों को राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति आवश्यक है। राज्यपाल वार्षिक रिपोर्ट राष्ट्रपति को भेजता है।

महत्व : यह हिल एरिया की जनजातीय संस्कृति, भूमि और प्रशासन को वैली के प्रभाव से बचाता है, जिससे आंतरिक संघर्ष कम होते हैं।

2.4 अनुच्छेद 371- F: सिक्किम के लिए विशेष प्रावधान

पृष्ठभूमि : संविधान (छत्तीसवें संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा सिक्किम को भारत का पूर्ण राज्य बनाए जाने पर जोड़ा गया। सिक्किम की राजशाही और लेपचा–भूटिया–नेपाली समुदायों की विशेष स्थिति को संरक्षित करने के लिए।

मुख्य प्रावधान :

1975 से पहले के पुराने कानून (सिक्किम की राजशाही काल के) जारी रहेंगे, जब तक संसद उन्हें संशोधित न करे। विधानसभा में सीटें लेपचा–भूटिया समुदायों के लिए आरक्षित, तथा संगी–भूटिया (मठों) के लिए एक सीट। भूमि स्वामित्व सिक्किमवासी (पुराने निवासी) ही संपत्ति खरीद सकते हैं, बाहरी लोग नहीं। राज्यपाल को विशेष शक्तियां विधानसभा भंग होने पर प्रशासन चलाने की।

महत्व : सिक्किम की अनोखी सांस्कृतिक पहचान (बौद्ध मठ, राजशाही अवशेष) और जनसांख्यिकीय संतुलन को बनाए रखता है।

2.5 अनुच्छेद 371- G: मिजोरम के लिए विशेष प्रावधान

पृष्ठभूमि : संविधान (तिरेपनवें संशोधन) अधिनियम, 1986 द्वारा मिजोरम को पूर्ण राज्य का दर्जा दिए जाने पर जोड़ा गया। मिजो समझौते (1986) का परिणाम।

मुख्य प्रावधान :

संसद मिजोरम में धार्मिकध्सामाजिक प्रथाओं, प्रथागत कानून, भूमि हस्तांतरण और नागरिकध्आपराधिक न्याय से संबंधित कानून नहीं बना सकती, जब तक मिजोरम विधानसभा संकल्प न पारित करे। अपवाद केवल रक्षा, आंतरिक सुरक्षा, विदेश मामले आदि पर केंद्र कानून बना सकता है।

महत्व : मिजो जनजातियों की संस्कृति, भूमि अधिकार और स्वायत्तता को पूर्ण सुरक्षा प्रदान करता है, जो शांति समझौते का आधार है।

2. 6 संविधान की छठी अनुसूची : पूर्वोत्तर राज्यों के जनजातीय क्षेत्रों के लिए स्वायत्तता

पृष्ठभूमि : यह अनुसूची असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम के जनजातीय क्षेत्रों के लिए है। इसका उद्देश्य जनजातीय समुदायों को स्व–शासन, संस्कृति और भूमि की सुरक्षा प्रदान करना है। यह 1950 से लागू है, लेकिन बाद में संशोधनों से मजबूत हुई।

मुख्य प्रावधान : स्वायत्त जिला परिषदें (Autonomous District Councils & ADCs) : प्रत्येक जनजातीय क्षेत्र में जिला परिषदें गठित, जिनमें चुने हुए और नामांकित सदस्य होते हैं (अधिकतम 30 सदस्य, 4 नामांकित)।

विधायी शक्तियां : परिषदें भूमि प्रबंधन, वन (गैर–आरक्षित), ग्राम न्यायालय, विरासत, विवाह, बाजार, शिक्षा (प्राथमिक तक), स्वास्थ्य आदि पर कानून बना सकती हैं।

न्यायिक शक्तियां : ग्राम परिषदें और जिला परिषदें प्रथागत कानूनों के तहत मुकदमे सुन सकती हैं।

वित्तीय शक्तियां : कर लगाना (भूमि राजस्व, बाजार कर), लाइसेंस शुल्क आदि।

राज्यपाल की भूमिका : परिषदों के कानूनों को मंजूरी देना, परिषद भंग करना, क्षेत्र विस्तार आदि।

कवर किए क्षेत्र : असम (बोडोलैंड, कार्बी आंगलोंग, धीमाजी), मेघालय (खासी, जयंतिया, गारो हिल्स), त्रिपुरा (त्रिपुरा ट्राइबल एरियाज), मिजोरम (चकमा, लाई, मारा)।

संरक्षण : केंद्र या राज्य इन क्षेत्रों में भूमि अधिग्रहण नहीं कर सकता बिना परिषद की सहमति केय जनजातीय संस्कृति (प्रथाएं, भाषा) को विशेष सुरक्षा।

महत्व : छठी अनुसूची पूर्वोत्तर की जनजातीय पहचान को संवैधानिक सुरक्षा देती है। यह श्स्वायत्तता का मॉडलश है जो सांस्कृतिक विविधता बनाए रखते हुए राष्ट्रीय एकता सुनिश्चित करता है। उदाहरण : बोडो समझौते (2020) ने इसे और मजबूत किया। हालांकि, चुनौतियां जैसे फंड की कमी और राज्य हस्तक्षेप बनी हुई हैं।

3. भाषाई और सांस्कृतिक आंदोलन

उत्तर पूर्वी भारत में भाषा और संस्कृति केवल संचार या परंपराएं नहीं, बल्कि लोगों की आत्मा का हिस्सा हैं। भाषाई और सांस्कृतिक आंदोलन इस क्षेत्र की पहचान की राजनीति का एक जीवंत स्वरूप हैं। असम में असमिया भाषा को बढ़ावा देने का आंदोलन हो, या मणिपुर में मेइतेई लिपि की मान्यता की मांग, ये आंदोलन केवल शब्दों या अक्षरों की लड़ाई नहीं हैं। ये उस गहरे लगाव की अभिव्यक्ति हैं, जो लोग अपनी जड़ों से महसूस करते हैं। जब एक असमिया दादी अपनी पोती को ''भूपेन हजारिका'' के गीत सिखाती है, या जब एक मणिपुरी नर्तक अपनी कला को मंच पर जीवंत करता है, तो यह केवल कला नहीं, बल्कि एक पहचान को जीवित रखने का प्रयास है। असम गण परिषद (AGP) जैसे राजनीतिक दल इस भाषाई गर्व को अपनी ताकत बनाते हैं, क्योंकि असमिया लोग अपनी भाषा को अपनी अस्मिता का आधार मानते हैं। मिजोरम में मप्रव भाषा और संस्कृति को स्कूलों में पढ़ाने की मांग भी यही दर्शाती है, अपनी पहचान को अगली पीढ़ी तक पहुंचाने की जिद। लेकिन ये आंदोलन बिना चुनौतियों के नहीं हैं।

बाहरी प्रभाव, चाहे वह वैश्वीकरण हो या दूसरी भाषाओं का प्रभुत्व, स्थानीय भाषाओं और संस्कृतियों पर दबाव डालता है। जब एक त्रिपुरा का युवा अपनी कोकबोरोक भाषा को स्कूलों में कमजोर होते देखता है, तो उसे लगता है कि उसकी पहचान का एक हिस्सा छिन रहा है। ये आंदोलन उस डर से उपजते हैं, डर कि उनकी कहानियां, उनके गीत, और उनकी परंपराएं समय के साथ खो जाएंगी। यह केवल भाषा की लड़ाई नहीं, बल्कि उस गर्व और प्रेम की कहानी है, जो लोग अपनी संस्कृति के लिए महसूस करते हैं। यह उस मेइतेई मां की हंसी है, जो अपनी बेटी को मणिपुरी नृत्य सिखाती है। यह उस नगा कवि की कलम है, जो अपनी भाषा में कविताएं लिखता है। ये आंदोलन उत्तर पूर्व के लोगों की उस चाहत को दर्शाते हैं, जो अपनी पहचान को न केवल जीवित रखना चाहते हैं, बल्कि उसे दुनिया के सामने गर्व के साथ पेश करना चाहते हैं।

प्रभाव और चुनौतियां

1. सामाजिक एकता पर प्रभाव

उत्तर पूर्वी भारत की सांस्कृतिक टेपेस्ट्री रंगों, भाषाओं और परंपराओं से बुनी गई है, लेकिन पहचान की राजनीति ने इस टेपेस्ट्री में खूबसूरती के साथ–साथ कुछ उलझे हुए धागे भी जोड़े हैं। सामाजिक एकता पर इसका प्रभाव दोधारी तलवार की तरह है। एक ओर, यह स्थानीय समुदायों को उनकी जड़ों से जोड़े रखता है, उन्हें अपनी भाषा, संस्कृति और इतिहास पर गर्व करने की ताकत देता है। मिजोरम में जब मप्रव लोग अपने त्योहार ''चापचार कुट'' को उत्साह से मनाते हैं, या असम में बोडो समुदाय अपनी पारंपरिक ''बागुरुम्बा'' नृत्य को जीवित रखता है, तो यह उनकी एकता और गर्व का प्रतीक है। यह पहचान उन्हें एक परिवार की तरह बांधती है, जो अपनी कहानियों को अगली पीढ़ी तक ले जाना चाहता है। लेकिन दूसरी ओर, यही पहचान कई बार समुदायों के बीच दीवारें खड़ी करती है। मणिपुर में मेइतेई और कुकी समुदायों के बीच तनाव इसका उदाहरण है। जब एक समुदाय को लगता है कि उसकी पहचान या संसाधनों पर खतरा है, तो यह तनाव हिंसा में बदल जाता है। यह केवल आंकड़ों या समाचारों की बात नहींय यह उस मां की चिंता है, जो अपने बच्चों को सुरक्षित रखना चाहती है, या उस युवा का गुस्सा, जो अपनी जमीन और संस्कृति को खोने के डर से जूझ रहा है। ये टकराव समुदायों के बीच विश्वास को तोड़ते हैं, और पड़ोसियों को अजनबियों में बदल देते हैं।

पहचान की राजनीति ने जहां समुदायों को अपनी आवाज बुलंद करने का मंच दिया, वहीं इसने सामाजिक एकता को भी चुनौती दी। जब नगा और कुकी समुदाय अपनी–अपनी स्वायत्तता की मांग करते हैं, तो यह केवल राजनीतिक नहीं, बल्कि भावनात्मक संघर्ष है। लोग अपनी पहचान को बचाने की कोशिश में एक–दूसरे से दूर हो जाते हैं। यह कहानी उस दादी की है, जो अपनी पोती को एकजुटता की कहानियां सुनाना चाहती है, लेकिन उसे डर है कि कहीं ये कहानियां तनाव की वजह न बन जाएं। सामाजिक एकता की यह चुनौती केवल नीतियों की नहीं, बल्कि उन लोगों की भावनाओं की है, जो अपने घर को एकजुट और सुरक्षित देखना चाहते हैं।

2. विकास और शासन पर प्रभाव

उत्तर पूर्वी भारत के लोग अपनी जमीन की समृद्धि और संभावनाओं को गर्व से देखते हैं, लेकिन पहचान की राजनीति ने विकास और शासन की राह में जटिलताएं पैदा की हैं। यह क्षेत्र चाय के बागानों, तेल के कुओं और प्राकृतिक सुंदरता से भरा है, लेकिन इन संसाधनों का लाभ अक्सर स्थानीय लोगों तक नहीं पहुंचता। पहचान आधारित आंदोलन, जैसे असम में प्रवास के खिलाफ प्रदर्शन या बोडोलैंड में स्वायत्तता की मांग, केवल राजनीतिक नारे नहीं हैं, ये उस किसान की पुकार हैं, जो अपनी जमीन पर मेहनत करता है, लेकिन उसका लाभ बाहरी कंपनियों को जाता देखता है। ये आंदोलन कई बार विकास परियोजनाओं को रोक देते हैं। जब सड़कें बननी हों, बांध बनाए जाने हों, या बुनियादी ढांचे का विकास हो, तो स्थानीय समुदायों को लगता है कि उनकी जमीन और संस्कृति खतरे में है। यह डर केवल कागजी नहीं, यह उस आदिवासी बुजुर्ग की चिंता है, जो अपनी जमीन को अपने बच्चों के लिए बचाना चाहता है। उदाहरण के लिए, मणिपुर में बांध परियोजनाओं के खिलाफ विरोध प्रदर्शन इस बात का प्रतीक हैं कि लोग अपनी पहचान और पर्यावरण को बचाने के लिए कितना जुनून रखते हैं। लेकिन इस जुनून ने कई बार विकास की गति को धीमा कर दिया।

शासन पर भी इसका गहरा प्रभाव पड़ा है। केंद्र और राज्य सरकारों के बीच तनाव, या स्थानीय स्वायत्त परिषदों की मांगों ने नीति निर्माण को जटिल बनाया है। यह केवल कागजों और बैठकों की बात नहीं, यह उस युवा की निराशा है, जो रोजगार के लिए इंतजार करता है, या उस मां की उम्मीद, जो चाहती है कि उसके गांव में बिजली और पानी पहुंचे। पहचान की राजनीति ने जहां स्थानीय समुदायों को सशक्त किया, वहीं इसने शासन को और अधिक संवेदनशील और समावेशी होने की चुनौती भी दी। यह कहानी केवल नीतियों की नहीं, बल्कि उन लोगों की है, जो चाहते हैं कि विकास उनकी पहचान को मिटाए बिना उनके जीवन को बेहतर बनाए।

3. राष्ट्रीय एकीकरण की चुनौती

उत्तर पूर्वी भारत का दिल अपनी विविधता में धड़कता है, लेकिन यह विविधता राष्ट्रीय एकीकरण के लिए एक जटिल चुनौती भी बनती है। पहचान की राजनीति ने इस क्षेत्र के लोगों को अपनी संस्कृति और इतिहास पर गर्व करना सिखाया, लेकिन इसने कई बार उन्हें राष्ट्रीय मुख्यधारा से अलग–थलग भी किया। जब नगा लोग ''ग्रेटर नगालिम'' की मांग करते हैं, या असम में लोग ''असमिया पहले'' का नारा बुलंद करते हैं, तो यह केवल राजनीतिक मांग नहीं, यह उस गहरी भावना की अभिव्यक्ति है, जो उन्हें लगता है कि उनकी आवाज दिल्ली की ऊंची इमारतों तक नहीं पहुंचती। यह चुनौती केवल नक्शे या सीमाओं की नहींय यह उस दूरी की है, जो लोग अपने दिलों में महसूस करते हैं। जब एक मेइतेई युवा को लगता है कि उसकी संस्कृति को राष्ट्रीय मंच पर उचित सम्मान नहीं मिलता, या जब एक त्रिपुरा आदिवासी को लगता है कि उसकी जमीन पर बाहरी लोग हावी हो रहे हैं, तो यह केवल असंतोष नहीं, बल्कि एक गहरी खाई है, जो राष्ट्रीय एकीकरण को मुश्किल बनाती है। अलगाववादी आंदोलन, जैसे नगालैंड और मिजोरम में देखे गए, इस खाई को और गहरा करते हैं।

लेकिन यह कहानी केवल तनाव की नहीं, यह उम्मीद की भी है। भारत सरकार की ''लुक ईस्ट'' और ''एक्ट ईस्ट'' नीतियों ने इस क्षेत्र को मुख्यधारा से जोड़ने की कोशिश की है। यह उस स्कूल की कहानी है, जहां असम का बच्चा हिंदी और अंग्रेजी के साथ अपनी भाषा भी सीखता है। यह उस सड़क की कहानी है, जो मेघालय के गांव को देश के बाकी हिस्सों से जोड़ती है। लेकिन इन कोशिशों को सफल बनाने के लिए जरूरी है कि नीतियां स्थानीय लोगों की भावनाओं और पहचान का सम्मान करें। राष्ट्रीय एकीकरण की यह चुनौती केवल सरकारों की नहीं, बल्कि हर उस व्यक्ति की है, जो चाहता है कि उत्तर पूर्व का हर रंग, हर गीत, और हर कहानी भारत की बड़ी कहानी का हिस्सा बने।

निष्कर्ष

उत्तर पूर्वी भारत असम, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नगालैंड, सिक्किम और त्रिपुरा का हर कोना अपनी सांस्कृतिक धरोहर और प्राकृतिक सुंदरता से चमकता है। उत्तर पूर्वी भारत की धरती, जहां पहाड़ गीत गाते हैं और नदियां कहानियां सुनाती हैं, एक ऐसी मिट्टी है जो विविधता और गर्व से सनी है। पहचान की राजनीति इस क्षेत्र की आत्मा का हिस्सा है, एक ऐसी शक्ति जो लोगों को उनकी जड़ों से जोड़े रखती है, उनकी भाषा, संस्कृति और इतिहास को जीवित रखती है। यह उस नगा बुजुर्ग की कहानी है, जो अपनी जनजातीय कहानियां सुनाकर अगली पीढ़ी को प्रेरित करता है। यह उस मेइतेई मां की हंसी है, जो अपनी बेटी को मणिपुरी नृत्य सिखाती है। लेकिन यह कहानी केवल गर्व की नहीं, बल्कि उन चुनौतियों की भी है, जो इस क्षेत्र को एकजुट

करने और राष्ट्रीय मुख्यधारा से जोड़ने में बाधा बनती हैं। पहचान की राजनीति ने लोगों को अपनी आवाज बुलंद करने का साहस दिया है। असम में प्रवास के खिलाफ आंदोलन हो या नगालैंड में स्वायत्तता की मांग, ये सभी उस गहरे लगाव को दर्शाते हैं, जो लोग अपनी मिट्टी से महसूस करते हैं। लेकिन इसने समुदायों के बीच तनाव भी पैदा किया, जैसे मणिपुर में मेइतेई और कुकी समुदायों के बीच। यह केवल नीतियों की बात नहींय यह उस दर्द की कहानी है, जो लोग तब महसूस करते हैं, जब उनकी पहचान खतरे में दिखती है।

शांति और विकास का रास्ता आसान नहीं, लेकिन असंभव भी नहीं। इसके लिए जरूरी है कि सरकार और समाज मिलकर ऐसी नीतियां बनाएं, जो स्थानीय पहचान का सम्मान करें और साथ ही एकता को बढ़ावा दें। यह उस स्कूल की जरूरत है, जहां हर बच्चा अपनी भाषा के साथ–साथ देश की दूसरी भाषाएं भी सीखे। यह उस सड़क की जरूरत है, जो गांवों को जोड़े, और उस नीति की, जो हर समुदाय को सुने। उत्तर पूर्व की यह यात्रा केवल राजनीति की नहीं, बल्कि उन लोगों की है, जो अपनी पहचान को गर्व से जीना चाहते हैं और भारत की बड़ी कहानी का हिस्सा बनना चाहते हैं।

संदर्भ सूची :–

1. Baruah, S. (2020). *In the name of the nation: India and its Northeast*. Stanford University Press.
2. Bhaumik, S. (2007). *Insurgencies in India's Northeast: Conflict, co-option and change*. East-West Center.
3. Chaube, S. K. (2012). *Hill politics in Northeast India* (Reprint ed.). Orient BlackSwan.
4. Das, N. K. (2009). Identity politics and social exclusion in India's North-East: The case for re-distributive justice. *Bangladesh e-Journal of Sociology, 6*(1), 1–17.
5. Haolai, S. (2022). Identity politics in northeast India. *International Journal of Health Sciences, 6*(S2), 4366–4371. https://doi.org/10.53730/ijhs.v6nS2.6008
6. Hazarika, S. (1995). *Strangers of the mist: Tales of war and peace from India's Northeast*. Penguin Books India.
7. Hazarika, S. (2000). *Rites of passage: Border crossings, imagined homelands, India's East and Bangladesh*. Penguin Books India.
8. Kumar, N. (2015). Identity politics in the hill tribal communities in the North-Eastern India. *Sociological Bulletin, 64*(1), 20–35. https://doi.org/10.1177/0038022915569937
9. Pachuau, J. L. K. (2014). *Being Mizo: Identity and belonging in Northeast India*. Oxford University Press.
10. Phanjoubam, P. (2016). *The Northeast question: Conflict and insurgency in insurgency-prone North East India*. Routledge India.
11. Singh, B. P. (1987). North-East India: Demography, culture and identity crisis. *Modern Asian Studies, 21*(2), 257–282. https://doi.org/10.1017/S0026749X00009399
12. Singh, B. P. (1998). *The problem of change: A study of North-East India*. Oxford University Press.
13. Singha, K. (2012). Identity, contestation and development in Northeast India: A study of Manipur, Mizoram and Nagaland. *Journal of Community Positive Practices, 12*(3), 403–424.
14. Srikanth, H. (2000). Militancy and identity politics in Assam. *Economic and Political Weekly, 35*(31), 2727–2733.
15. Wouters, J. J. P. (Ed.). (2022). *Vernacular politics in Northeast India: Democracy, ethnicity, and indigeneity*. Oxford University Press.